

अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में वेटिवर घास की खेती : संरक्षण, उपयोगिता एवं संभावनाएँ डा० पूर्णिमा सिंह सिकरवार

परिचय:

भारत का लगभग एक तिहाई भूभाग शुष्क एवं अर्ध-शुष्क श्रेणी में आता है, जहाँ वर्षा अनियमित, मृदा उथली एवं जल संग्रहण क्षमता कमजोर होती है। इन परिस्थितियों में परंपरागत फसलों की उपज सीमित रहती है और भूमि कटाव, मरुस्थलीकरण तथा भूजल स्तर में गिरावट जैसी समस्याएँ लगातार बढ़ रही हैं। ऐसे में वेटिवर घास (वानस्पतिक नाम क्रिसोपोगोन जिजैनियोइडीज, जिसे उत्तर एवं पश्चिम भारत में खस के नाम से भी जाना जाता है) एक बहुउद्देशीय बहुवर्षीय घास के रूप में उभरी है। यह घास न केवल विषम जलवायु एवं अल्प जल उपलब्धता में जीवित रह सकती है, बल्कि मृदा एवं जल संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण तथा सुगंधित तेल उत्पादन के माध्यम से किसानों की आय बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध होती है।

वानस्पतिक परिचय

वेटिवर पोएसी कुल की एक सघन झुरमुट बनाने वाली बहुवर्षीय घास है, जिसकी पत्तियाँ लंबी, संकरी एवं सीधी खड़ी रहती हैं तथा पौधे की ऊँचाई सामान्यतः 1.5 मीटर तक पहुँच जाती है। इसकी सबसे विशिष्ट पहचान इसकी जड़ प्रणाली है, जो भूमि के भीतर लंबवत दिशा में 3 से 4 मीटर तक अथवा कुछ अनुकूल मृदा में इससे भी अधिक गहराई तक प्रवेश करती है। यह घास बीज रहित होने के कारण अनियंत्रित रूप से नहीं

फैलती, जिससे इसे खरपतवार बनने का खतरा नहीं रहता और इसे नियंत्रित पंक्तियों में सुरक्षित रूप से लगाया जा सकता है।

अर्ध-शुष्क क्षेत्रों की पारिस्थितिक स्थिति

वर्ष 2022 में किए गए एक उच्च विभेदन मानचित्रण अध्ययन के अनुसार भारत में अर्ध-शुष्क खुले प्राकृतिक पारितंत्र लगभग 3.2 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले हुए हैं, जो देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का लगभग 10 प्रतिशत है। इनका प्रमुख विस्तार राजस्थान, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश एवं गुजरात राज्यों में देखा जाता है। इन क्षेत्रों की मुख्य विशेषताएँ हैं: वार्षिक वर्षा 400 से 750 मिलीमीटर के बीच, ग्रीष्म ऋतु में अत्यधिक ताप, उथली एवं कम उर्वरता वाली मृदा तथा तीव्र जल अपवाह के कारण होने वाला मृदा कटाव। इन्हीं परिस्थितियों में वेटिवर की गहरी जड़ प्रणाली एवं सूखा सहनशीलता इसे एक आदर्श संरक्षण फसल बनाती है।

वेटिवर की अनुकूलन क्षमता

वेटिवर अत्यंत विषम मृदा एवं जलवायु परिस्थितियों में भी जीवित रहने की क्षमता रखता है। यह 8.5 से 10 तक के पी-एच मान वाली क्षारीय मृदा में तथा अल्प उर्वरता वाली रेतीली एवं पथरीली भूमि में भी सफलतापूर्वक स्थापित हो जाता है। परिपक्व पौधे जलभराव की अल्पकालिक स्थिति को भी

डा० पूर्णिमा सिंह सिकरवार

सहायक प्राध्यापक

उद्यान विभाग, शुआदस विश्वविद्यालय, प्रयागराज— 211007 (उत्तर प्रदेश) भारत।

सहन कर लेते हैं, जबकि दूसरी ओर लंबे समय तक चलने वाले सूखे में भी इसकी पत्तियाँ सूखने के बावजूद जड़ प्रणाली जीवित बनी रहती है। इसके अतिरिक्त यह घास सीसा, कैडमियम एवं क्रोमियम जैसी भारी धातुओं तथा प्रदूषित जल में घुले हानिकारक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता भी रखती है, जिससे यह औद्योगिक अपशिष्ट प्रबंधन में भी उपयोगी सिद्ध हुई है।

वैज्ञानिक खेती विधि

वेटिवर की खेती के लिए भूमि की गहरी जुताई करके 2 से 3 बार हैरो चलाना पर्याप्त होता है, विशेष तैयारी की आवश्यकता नहीं पड़ती। प्रवर्धन जड़ सहित स्लिप (मूल प्ररोह) द्वारा किया जाता है, जिन्हें पंक्ति से पंक्ति 50 सेंटीमीटर तथा पौधे से पौधे 15 से 20 सेंटीमीटर की दूरी पर रोपा जाता है। मृदा एवं जल संरक्षण हेतु इन्हें समोच्च रेखा (कंटूर) पर सघन पंक्तियों में लगाया जाता है, जिससे कुछ ही महीनों में एक अभेद्य हरित अवरोध तैयार हो जाता है। पोषक तत्व प्रबंधन एवं सिंचाई से संबंधित अनुशंसित मात्राएँ तालिका 1 में दी गई हैं।

सुगंधित तेल की मात्रा सर्वाधिक होती है। खुदाई के पश्चात जड़ों को धोकर छाया में सुखाया जाता है और भाप आसवन विधि द्वारा उनसे तेल निकाला जाता है।

मृदा एवं जल संरक्षण में भूमिका

वेटिवर की सघन एवं गहरी जड़ प्रणाली भूमि को जकड़कर रखती है, जिससे वर्षा जल के तीव्र बहाव में होने वाला मृदा कटाव प्रभावी रूप से रुक जाता है। समोच्च रेखा पर लगाई गई वेटिवर पंक्तियाँ जल के बहाव की गति को कम कर उसे भूमि में रिसने का समय देती हैं, जिससे भूजल पुनर्भरण में भी सहायता मिलती है। इसी वैज्ञानिक आधार पर फरवरी 2025 में हिमाचल प्रदेश सरकार ने राज्य में बढ़ती भूस्खलन घटनाओं से निपटने के लिए एक जैव-अभियांत्रिकी पहल के अंतर्गत वेटिवर घास की खेती की एक प्रायोगिक परियोजना आरंभ की। राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण द्वारा की गई निगरानी में पौधों की उच्च जीवित रहने की दर एवं स्थानीय परिस्थितियों के प्रति अच्छा अनुकूलन दर्ज किया गया, जो यह दर्शाता है कि वेटिवर पर्वतीय ढलानों के

क्र.सं.	प्रबंधन घटक	अर्ध-शुष्क क्षेत्र हेतु अनुशंसा	टिप्पणी
1.	नाइट्रोजन उर्वरक	120 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष	दो से तीन किशतों में
2.	फास्फोरस उर्वरक	60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष	रोपाई के समय पूर्ण मात्रा
3.	पोटाश उर्वरक	40 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष	रोपाई के समय पूर्ण मात्रा
4.	सिंचाई (शुष्क क्षेत्र)	6 से 8 सिंचाइयाँ प्रति वर्ष	वर्षा आधारित क्षेत्रों में आवश्यक नहीं
5.	रोपण दूरी	50 × 15–20 सेंटीमीटर	समोच्च रेखा पर पंक्ति रोपण
6.	जड़ खुदाई अवधि	रोपाई के 12 से 18 माह पश्चात	तेल हेतु परिपक्व जड़ आवश्यक

जड़ों की खुदाई सामान्यतः रोपाई के 12 से 18 माह पश्चात की जाती है, जब

साथ-साथ मैदानी अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में भी भूमि स्थिरीकरण हेतु प्रभावी है।

आर्थिक एवं औद्योगिक उपयोगिता

वेटिवर से प्राप्त सुगंधित तेल की राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय बाजार में मांग निरंतर बनी रहती है, जिसका मूल्य वर्तमान में लगभग 20 हजार से 25 हजार रुपये प्रति लीटर तक है। यह तेल सुगंध, प्रसाधन एवं औषधि उद्योग में व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त वेटिवर की पत्तियों का उपयोग हस्तशिल्प, चटाई एवं छप्पर निर्माण में तथा जड़ों का उपयोग पारंपरिक खस-खस के पर्दे एवं शीतलक बनाने में होता है।

वर्तमान स्थिति एवं हालिया पहल

देश के विभिन्न राज्यों में वेटिवर आधारित संरक्षण एवं आय सृजन कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जा रहा है। हिमाचल प्रदेश में भूस्खलन नियंत्रण हेतु प्रायोगिक परियोजना के अतिरिक्त, उत्तर प्रदेश सहित कई राज्यों में वेटिवर की खेती को औषधीय एवं सुगंधित पौध मिशन के अंतर्गत प्रोत्साहित किया जा रहा है। तालिका 2 में अर्ध-शुष्क पारितंत्र से जुड़े प्रमुख राज्यों का सारांश प्रस्तुत है।

सीमाएँ एवं चुनौतियाँ

वेटिवर की व्यापक स्वीकार्यता में कुछ



क्र.सं.	राज्य	अर्ध-शुष्क क्षेत्र की मुख्य विशेषता
1.	राजस्थान	सबसे बड़ा अर्ध-शुष्क एवं शुष्क विस्तार, अत्यधिक कटाव-प्रवण मृदा
2.	मध्य प्रदेश	पठारी भूभाग, असमान वर्षा वितरण
3.	महाराष्ट्र	दक्कन पठार का वर्षा-छाया क्षेत्र, बार-बार सूखा
4.	आंध्र प्रदेश	तटीय एवं आंतरिक भागों में अर्ध-शुष्क पट्टी
5.	गुजरात	उथली मृदा एवं उच्च वाष्पीकरण दर
6.	उत्तर प्रदेश (बुंदेलखंड)	अनियमित मानसून, भूजल स्तर में निरंतर गिरावट

बाधाएँ भी विद्यमान हैं। प्रारंभिक रोपण सामग्री (स्लिप) की उपलब्धता सीमित होना, तेल आसवन इकाइयों की कमी, प्रसंस्करण हेतु आवश्यक पूँजी निवेश तथा किसानों में तकनीकी जानकारी का अभाव प्रमुख चुनौतियाँ हैं। इसके अतिरिक्त तेल की उपज एवं गुणवत्ता जलवायु, मृदा एवं जड़ों की परिपक्वता अवधि पर निर्भर करती है, जिसके कारण उत्पादन में एकरूपता बनाए रखना कठिन होता है। बाजार तक सीधी पहुँच न होने से भी किसानों को बिचौलियों पर निर्भर रहना पड़ता है।

भविष्य की संभावनाएँ

अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के बढ़ते प्रभाव, घटती वर्षा एवं भूजल संकट को देखते हुए वेटिवर आधारित कृषि वानिकी प्रणाली भविष्य में अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है। सामुदायिक स्तर पर छोटी आसवन इकाइयाँ स्थापित करने, कृषक उत्पादक संगठनों के माध्यम से सीधी बाजार पहुँच सुनिश्चित करने तथा शोध संस्थानों द्वारा अधिक तेल उपज वाली प्रजातियों के विकास से इस फसल की व्यावसायिक व्यवहार्यता और बढ़ सकती है। साथ ही सड़क किनारे ढलान स्थिरीकरण, नहर किनारे कटाव नियंत्रण एवं खनन क्षेत्रों की पुनर्स्थापना जैसी योजनाओं में वेटिवर को सम्मिलित करने से इसकी मांग में निरंतर वृद्धि की प्रबल संभावना है।

वेटिवर घास अर्ध-शुष्क क्षेत्रों के लिए एक ऐसी बहुउद्देशीय फसल है जो मृदा एवं जल संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण तथा आर्थिक आय सृजन को एक साथ संभव बनाती है। इसकी गहरी जड़ प्रणाली, सूखा सहनशीलता

एवं क्षारीय मृदा के प्रति अनुकूलन क्षमता इसे परंपरागत फसलों की तुलना में विशेष लाभप्रद बनाती है। उचित तकनीकी सहयोग, आसवन अवसंरचना एवं बाजार संपर्क उपलब्ध कराए जाने पर यह फसल न केवल पर्यावरण संरक्षण में बल्कि अर्ध-शुष्क क्षेत्रों के किसानों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने में भी दूरगामी योगदान दे सकती है।

